इकाई 25 सामाजिक नीति और भारतीय प्रतिक्रिया

इकाई की रूपरेखा

25.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप औपनिवेशिक सामाजिक नीति को प्रभावित करने वाले कारकों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। इसे पढ़ने के बाद आप :

- भारत में अंग्रेज़ों की आरंभिक सामाजिक नीतियों का उल्लेख कर सकेंगे,
- भारतीय सामाजिक प्रथाओं में अंग्रेज़ों द्वारा लगातार किए गए हस्तक्षेप पर प्रकाश डाल सकेंगे,
- अंग्रेज़ों की सामाजिक नीतियों के प्रभाव और भारतीय प्रतिक्रिया का विश्लेषण कर सकेंगे।

25.1 प्रस्तावना

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्लासी और बक्सर के युद्ध में विजयी होने के बाद इंग्लिश ईस्ट इंडिया कंपनी बंगाल में एक विजयी व्यापारिक सैन्य शक्ति के रूप में उभर कर सामने आई। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश कंपनी शनैः शनैः व्यापारिक-आक्रमणकारी से आगे बढ़कर शासक के रूप में परिणत हो गई। शासक बनने के बाद अंग्रेज़ों ने संस्थागत संरचना में परिवर्तन को आवश्यक समझा। इसके अलावा, शासित जनता पर शासन करने के लिए उन्होंने नीति संबंधी एक निश्चित दृष्टिकोण भी विकसित किया। इस क्रम में आरंभ में उन्होंने उपनिवेश-पूर्व संस्थाओं और शासन व्यवस्था को अपनाया। बाद में उन्होंने उसमें कुछ अस्थाई परिवर्तन किए। इसके बाद उन्होंने सरकारी संस्थाओं के स्वरूप को पुनर्व्यवस्थित करना शुरू किया।

ब्रिटेन में हो रहे आर्थिक और बौद्धिक बदलाव और भारत में स्थापित नई औपनिवेशिक व्यवस्था की जरूरतों और सीमाओं ने नीति निर्धारण में पृष्ठभूमि के रूप में कार्य किया।

25.2 औपनिवेशिक नीति निर्माण का इतिहास लेखन

सामाजिक कार्यकलापों में राज्य के हस्तक्षेप को समझने के लिए औपनिवेशिक नीति का अध्ययन आवश्यक है। आरंभिक अंग्रेज़ प्रशासकों और आर.सी. दत्त जैसे भारतीय

राष्ट्रवादियों (जिन्होंने भारत में अंग्रेज़ों की नीतियों पर टिप्पणी की) के विचार एक-दूसरे के विरोधी थे, पर उनके कुछ विचार आपस में मेल भी खाते थे। दोनों प्रकार के दृष्टिकोणों में औपनिवेशिक राज्य को एक अखंड सत्ता के रूप में स्वीकार किया गया और यह भी स्वीकार किया गया कि अगर यह चाहे तो भारतीय समाज में बदलाव आ सकता है। इस तर्क को ध्यान में रखते हुए राज्य नीति की दिशा और स्वरूप को समझने के लिए सरकारी तंत्र के उच्च तबके पर प्रकाश डालना तर्कसंगत होगा।

बाद में, रजनी पाम दत्त जैसे मार्क्सवादी लेखकों ने ब्रिटिश नीति निर्धारण के अध्ययन के क्रम में महानगरीय अर्थव्यवस्था की जरूरतों पर प्रकाश डाला। इतिहास लेखन की एक उल्लेखनीय प्रवृत्ति में औपनिवेशिक नीति निर्धारक के वैचारिक प्रभाव पर प्रमुख रूप से विचार किया गया। इसके अनुसार इस वैचारिक दृष्टिकोण ने नीति निर्धारण को प्रभावित किया। क्षेत्रीय और ज़िला स्तर पर हुए हाल के अध्ययनों में इस मान्यता का खंडन किया गया कि नीति निर्धारण में अखंडित औपनिवेशिक राज्य प्रमुख तत्व होता है। इन अध्ययनों में नीति निर्धारण के लिए क्षेत्रीय शक्तियों की संरचना को विशेष महत्वपूर्ण माना गया है।

25.3 अंग्रेज़ों की आरंभिक सामाजिक नीति

"सामाजिक नीति" के तहत कानून, शिक्षा, परिवार, अपराधिक वृत्ति, सामाजिक स्तर, सामाजिक सूचनाओं को इकट्ठा करना और ऐसे ही कई प्रकार के तत्व शामिल होते हैं, जिनके माध्यम से शासित जनता के सामूहिक जीवन में हस्तक्षेप किया जा सकता है और उन्हें नियंत्रित किया जा सकता है। आपने महसूस किया होगा कि ऊपर हमने "सामाजिक नीति" का प्रयोग बृहत अर्थों में किया है और इनमें से बहुत सी बातों की जानकारी हम पिछली इकाइयों में प्राप्त कर चुके हैं। हम लोग इस इकाई में उन भारतीय सामाजिक संस्थाओं के प्रति ब्रिटिश दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करेंगे, जिनकी ओर औपनिवेशिक काल के आरंभ में ही अंग्रेज़ों और भारतीयों का ध्यान आकृष्ट हुआ था और इस संबंध में कुछ कार्यवाही भी की गई थी। मुख्य रूप से इस विचार-विमर्श के केंद्र में बंगाल का जिक्र हुआ है। बंगाल भारत में कंपनी का मुख्यालय था। इसपर सबसे पहले अंग्रेज़ों ने कब्जा जमाया और यहां पर प्रशासन और राज्य नीति संबंधी अनेक उपायों का प्रयोग किया। बंगाल में शिक्षित मध्यम वर्ग की संख्या अपेक्षाकृत अधिक थी। इन्होंने सामाजिक नीति के पनपने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कलकत्ता में अंग्रेज़ों की आर्थिक गतिविधियों और उच्च वर्ग के बीच पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार से उस शहर के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में एक हलचल सी मच गई। पढ़े-लिखे बंगाली विशिष्ट जन अंग्रेज़ों की नीतियों पर सक्रिय रूप में बहस करने लगे और अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने लगे। इसके अतिरिक्त, उन्होंने इन नीतियों को एक आकार देने में भी मदद की।

भारत का पहले गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स एक अंग्रेज़ी "सरकारी अफसर तंत्र" कायम करना चाहता था, जिनकी भारतीय भाषाओं पर अच्छी पकड़ हो और जो भारतीय परंपराओं को समझते हों। 1784 में हेस्टिंग्स ने महसूस किया कि "जिनपर हमें शासन करना है, उनके बारे में छोटी से छोटी जानकारी प्राप्त करना और सामाजिक संपर्क के माध्यम से सूचनाएं इकट्ठी करना, साम्राज्य की विजय को मज़बूत करने की ओर एक आगे बढ़ा हुआ कदम होता है, यह राज्य के लिए लाभदायक होता है, यह मानवता की उपलब्धि है......" हेस्टिंग्स चाहता था कि परंपरागत भारतीय भाषाओं को ठीक से सीखा जाए, क्योंकि इससे भारत को समझने और अधीनस्थ जनता से संपर्क स्थापित करने में मदद मिलेगी। इस उद्देश्य से उसने ऑक्सफोर्ड में फारसी भाषा के प्रोफेसर का एक पद निर्मित करने का प्रस्ताव तैयार किया। भारत आने के पहले सिविल सर्विस के अधिकारियों को फारसी और हिंदुस्तानी सीखने की प्रेरणा दी जाती थी। भाषा संबंधी प्रशिक्षण देने का फैसला 1790 में लिया गया। पर तात्कालिक समाधान के रूप में वारेन हेस्टिंग्स ने उन पदाधिकारियों को बढ़ावा और प्रोत्साहन दिया, जो भारतीय कानून और विधिशास्त्र संबंधी ग्रंथों के अध्ययन और अनुवाद में रुचि रखते थे। इस गतिविधि को प्रोत्साहित करने के लिए अनुवाद करने के एवज में अच्छी रकम का प्रावधान रखा गया। अंग्रेज़ों ने बंगला भाषा के सुव्यवस्थित अध्ययन को एक दिशा दी। हेस्टिंग्स के अंतरंग नैथनियेल हैथेड ने

हिंदू रीति-रिवाजों और धार्मिक कानूनों को अनूदित और संकलित किया। 1788 ई. में उसने बंगला भाषा का व्याकरण प्रकाशित करवाया।

हेस्टिंग्स ने भारतीय भाषाओं में कम्पनी के दस्तावेज़ों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया और इस प्रयास के फलस्वरूप कलकत्ता में मुद्रण और प्रकाशन की शुरुआत हुई। भारत के अतीत और आरंभिक परंपराओं की खोज निकालने के लिए एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना हुई, इसकी स्थापना में वारेन हेस्टिंग्स का प्रमुख हाथ था। कलकत्ता मदरसा की स्थापना इस दिशा में लिया गया दूसरा कदम था।

हेस्टिंग्स के शासन काल में अपनाई गई सांस्कृतिक और सामाजिक नीति में पूर्वी संस्कृति की ओर झुकाव की स्पष्ट झलक मिलती है। इसे ''ब्रिटिश ओरियंटलिज्म'' की विचारधारा भी कह सकते हैं। यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि यह विचारधारा भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की जरूरतों को पूरा करने के लिए लागू की गई थी। किसी देश पर लंबे समय तक शासन करने के लिए और वहां स्थाई संस्थाओं के निर्माण के लिए शासित देश की जनता की प्रवृत्ति, उनके सामाजिक रीति-रिवाज, आदतों और मान्यताओं के बारे में जानना बहुत जरूरी था। हेस्टिंग्स चाहता था कि शासितों पर उनके तरीकों से ही शासन किया जाए, न कि उनका अंग्रेज़ीकरण किया जाए। ये सारी बातें प्राच्यवादी अवधारणाओं और लिए गए राजनीतिक निर्णयों से पूरी तरह स्पष्ट होती हैं। पश्चिमी मालाबार तट की स्थिति से संबंधित आरंभिक ब्रिटिश सरकारी दस्तावेजों को देखने से यह बात और भी खुलासा हो जाती है। उसमें स्थानीय सामाजिक प्रथाओं के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रूप अपनाया गया है, हालांकि वे पश्चिमी रीति-रिवाजों से बिल्कुल भिन्न थे। उदाहरण के लिए नायर की मातृसत्तात्मक और बहुपतित्व जैसी प्रथाओं पर एक रिपोर्ट 18वीं शताब्दी में तैयार की गई, पर इसमें उनकी निंदा नहीं की गई और इसे नायर पुरुषों के वैवाहिक संबंध के परिणाम के रूप में व्याख्यायित किया गया है। बाद में उन्नीसवीं शताब्दी में इस विवाह पद्धति को अप्राकृतिक और नायर महिलाओं के बहुपतित्व को ''वेश्यावृत्ति'' और ''अनैतिक'' कहा गया।

बोध प्रश्न 1

1) औपनिवेशिक नीति निर्धारण से संबद्ध इतिहास लेखन की कौन-कौन सी विभिन्न प्रवृत्तियां थीं? पचास शब्दों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

2) वारेन हेस्टिंग्स के शासन काल में अंग्रेज़ों की सांस्कृतिक और सामाजिक नीति क्या थी? दस पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

25.4 औपनिवेशिक सामाजिक हस्तक्षेप में बदलाव

हेस्टिंग्स का शासन काल समाप्त होने के बाद भारत सरकार की नीतियों और दृष्टिकोण में परिवर्तन आए। सरकार हिचकिचाते हुए ही सही, पर धीरे-धीरे भारतीय सामाजिक संस्थाओं में हस्तक्षेप करने लगी। हेस्टिंग्स की प्राच्यवादी नीति की आलोचना की गई और यह कहा गया कि तत्काल भारतीय समाज के आधुनिकीकरण और पश्चिमीकरण की आवश्यकता है। विलियम बिल्बरफोर्स और चार्ल्स ग्रांट (जो बाद में कंपनी के बोर्ड ऑफ कंट्रोल का अध्यक्ष बना) ने धर्म परिवर्तन को भारत के आधुनिकीकरण और पश्चिमीकरण का हथियार माना। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हिंदू धर्म में अंधविश्वास, मूर्ति-पूजा और पंडितों की मनमानी जैसी कई बीमारियां थीं। अतः उनका मानना था कि ईसाई मिशनरियों के माध्यम से धर्म प्रचार कर भारत का आधुनिकीकरण किया जा सकता था। जेरेमी बेंथम, जेम्स मिल और जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे उग्रवादियों के नेतृत्व में एक विचारधारा सामने आई, जिसके अनुसार बेहतर शासन वह होता है जो ज्यादा से ज्यादा लोगों को खुशियां बांट सके। एक अच्छी सरकार में स्वतंत्रता की अपेक्षा यह गुण सर्वोपरि होता है। व्यक्तिगत जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा प्रदान कर इस उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है। ये विचार उपयोगितावादी विचारधारा पर आधारित थे।

इन विचारधाराओं ने नीति निर्धारण को एक वैचारिक आधार प्रदान किया। पर भारत में पश्चिमी आदर्शों को पूर्ण रूप से एक बारगी नहीं थोपा गया, क्योंकि इससे व्यापक विरोध, प्रतिरोध और विद्रोह फैल सकता था और अंग्रेज़ों के सामने राजनीतिक संकट उत्पन्न हो सकता था। अब हम उन प्रयत्नों की चर्चा करेंगे, जिनके माध्यम से अंग्रेज़ सरकार ने भारतीय रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप करने की कोशिश की।

25.4.1 बाल हत्या

ब्रिटिश भारतीय सरकार ने सबसे पहले बाल हत्या जैसी प्रथा को समाप्त किया। भारत के कई हिस्सों में बालिकाओं का वध आम बात थी। राजपूतों, जाटों, मेवातियों और बनारस के राजपूत राजकुमारों को अपनी बेटी ब्याहने में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था और उन्हें काफी राशि भी खर्च करनी पड़ती थी। इससे लोग अपनी बेटियों को जन्म लेते ही मारने लगे, कभी भूखा रखकर, कभी जहर देकर। सबसे पहले बनारस के रेजिडेंट जानथन डनकन ने इस प्रथा को समाप्त करने की कोशिश की। उसने कोई एकतरफा अधिनियम नहीं पारित किया, बल्कि स्थानीय राजकुमारों को जाकर समझाया कि बालिकाओं की हत्या हिंदू धर्म-ग्रंथों में कही बातों के खिलाफ है। डनकन यह बात समझता था कि बालिकाओं की हत्या जैसी सामाजिक प्रथा का मूल कारण आर्थिक था, अतः उसने राजकुमारों से आग्रह किया कि अगर वे इस बुरी प्रथा को छोड़ देंगे तो उन्हें इसके बदले में मुआवजा दिया जाएगा।

रिवरेन्ड वार्ड ने अपनी पुस्तक "ए व्यू ऑफ द हिस्ट्री, लिट्रेचर एंड रेलिजन ऑफ द हिंदूज़" में बंगाल में बाल हत्या की प्रथा का विस्तार से वर्णन किया है। फ़ोर्ट विलियम कॉलेज में कार्यरत एक धर्मप्रचारक विलियम कैरे ने इस प्रथा की समाप्ति का ज़ोरदार समर्थन किया। सेरामपुर मिशनरी के प्रति सहानुभूति रखने वाले गवर्नर जनरल काउंसिल के एक सदस्य ने वेलेस्ली का ध्यान इन सामूहिक बुराइयों की ओर खींचा। कैरे ने पहले हिंदू पंडितों से राय-मशविरा किया और फिर सरकार के सामने इन सामाजिक बुराइयों को तुरंत समाप्त करने की याचिका दायर की। इसी समय काउंसिल के उपाध्यक्ष को कलकत्ता के मैजिस्ट्रेटों ने एक सामूहिक पत्र लिखकर सूचित किया कि मुगल या ब्रिटिश सरकार ने कभी भी बाल हत्या को मान्यता नहीं दी थी। उन्होंने यह भी कहा कि जब पुलिस इन हत्याओं को रोकने का प्रयास करती है, तो कोई जन प्रतिरोध नहीं होता है।

अंततः 1802 के अधिनियम IV के रूप में एक कानून बना और बाल हत्या पर पाबंदी लगा दी गई।

बाल हत्या पर पाबंदी लगने से बंगाल पर इसका काफी असर हुआ और जनता के बीच कोई खास प्रतिरोध भी नहीं हुआ। अंग्रेज़ों को इस प्रथा को आसानी से समाप्त करने में शायद इसलिए किसी दिक्कत का सामना नहीं करना पड़ा क्योंकि एक तो यह बंगाल पर

सीमित थी और दूसरे इसे धार्मिक अनुमति नहीं प्राप्त थी। पर भारत के दूसरे हिस्सों में भी इस पाबंदी का कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा और यह प्रथा पाबंदी के बावजूद जारी रही।

बाल हत्या रोकने की शुरुआत स्थानीय अधिकारियों और मिशनरियों ने की। पंडितों की राय जान लेने के बाद ही गवर्नर जनरल ने अपनी स्वीकृति दी और यह भी ठोक बजाकर देख लिया कि इससे कोई गड़बड़ी तो नहीं फैलेगी।

25.4.2 सती प्रथा

इसके बाद विधवा को जलाने की प्रथा या सती प्रथा को रोकने के लिए कदम उठाए गए। भारतीय सामाजिक जीवन में यह दूसरा महत्वपूर्ण हस्तक्षेप था। 19वीं शताब्दी के आरंभ में सभी तीन प्रेसिडेंसियों में यह प्रथा फैली हुई थी, पर बंगाल के निचले ज़िलों में यह प्रथा अधिक मज़बूत थी और वहां से इस ''दुर्घटना'' की ज्यादा खबर मिलती थी।

निचले प्रांतों में सती प्रथा संबंधी सरकारी आंकड़े

डिवीजन	वारदातों की संख्या
कलकत्ता	3379
ढाका	408
मुर्शिदाबाद	198
पटना	425
बनारस	875
बरेली	140
कुल	5425

विधवाओं को जलाने की प्रथा केवल ब्राह्मणों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि यह अन्य जातियों के बीच भी प्रचलित थी। इसके बावजूद कुल जनसंख्या को मद्दे-नज़र रखते हुए सती प्रथा की वारदात का प्रतिशत कम था। उदाहरणस्वरूप 1825 में हैजा से 25,000 से ज्यादा लोग मर गए। उस वर्ष बंगाल के ज़िले में 63 विधवाओं को जलाने की सूचना मिली।

1795 में ही कॉलेब्रुक ने यह साबित करने की कोशिश की थी, कि सती प्रथा प्रामाणिक वैदिक परम्परा के अनुरूप नहीं है। हालांकि काफी पहले से ही सती प्रथा की छुटपुट घटनाएं होती थीं, पर अकबर, जहांगीर, गुरु अमरदास, मराठा सरदार अहल्याबाई, पेशवा, तंजौर के राजा और गोआ के पुर्तगाली शासकों ने इस प्रथा को हतोत्साहित किया और इसे रोकने की कोशिश की।

19वीं शताब्दी तक इस अमानवीय प्रथा को रोकने का कोई सार्थक और सही प्रयास नहीं किया गया। बंगाल में स्थापित अन्य यूरोपीय कंपनियों ने अपने अधिकार-क्षेत्रों में सती प्रथा पर प्रतिबंध लगा दिया, जबकि कलकत्ता सुप्रीम कोर्ट ने इसे केवल शहर के एक हिस्से में प्रतिबंधित किया।

इस प्रथा के प्रति सरकार के दृष्टिकोण का पता ब्रुक की कार्यवाई से लगता है। शाहाबाद के कलक्टर ब्रुक ने 1789 में सती प्रथा पर प्रतिबंध लगा दिया। इस प्रथा का गवर्नर जनरल कार्नवालिस से उल्लेख करते हुए उसने टिप्पणी की "हिंदू धर्म की मान्यताओं और प्रथाओं के प्रति थोड़ी-बहुत सहिष्णु दृष्टि अपनाई जा सकती है, पर एक अमानवीय प्रथा पर कुछ न कुछ नियंत्रण स्थापित करना जरूरी लगता है।" कार्नवालिस ने ब्रुक को दमनात्मक तरीका अपनाने से मना किया और कहा कि लोगों से इस प्रथा को छोड़ने का अनुरोध भर किया जाए। 1797 में मिदनापुर के ज़िलाधिकारी ने एक बाल विधवा को जलाए जाने से रोका। उसे भी गवर्नर जनरल से निर्देश प्राप्त हुआ कि दमन को छोड़ आग्रह की नीति अपनाई जाए।

विलियम कैरे के नेतृत्व में सेरामपुर मिशनरी ने कलकत्ता के आसपास के इलाके में विधवा दहन का सर्वेक्षण किया। कैरे ने फोर्ट विलियम कॉलेज में कार्यरत पंडितों की सहायता ली, उन्होंने हिंदू शास्त्रों में सती से सम्बद्ध सूचनाएं इकट्ठी कीं। इन सामग्रियों का अध्ययन करने के बाद कैरे इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि हिंदू धर्म में न तो इसका निषेध किया गया है,

न ही इसे जरूरी करार दिया है। इसके बाद कैरे ने सती प्रथा को समाप्त करने के लिए वेलेस्ली के पास एक ज्ञापन भेजा। 1805 में वेलस्ली ने निजामत अदालत के न्यायाधीशों को यह पता लगाने का काम सुपुर्द किया कि कहां तक सती प्रथा हिंदू धर्म पर आधारित थी। न्यायालय के पंडितों ने यह ऐलान किया कि जबरदस्ती सती होने के लिए किसी विधवा को मजबूर किए जाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। न्यायालय ने इस बात पर भी गौर फरमाया कि सती प्रथा हिंदुओं के बीच लोकप्रिय है, और इसे समाप्त करने का कोई भी प्रयत्न असंतोष को जन्म दे सकता है।

थोड़ी-सी हिचकिचाहट के बाद 1813 में सरकार ने यह तय किया कि 16 वर्ष से कम उम्र की विधवा को सती नहीं होने दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त जिस विधवा का बच्चा तीन साल से छोटा हो, उसे भी सती होने की अनुमनि नहीं दी जाएगी। पर अगर कोई उस बच्चे की जिम्मेदारी ले लेता है, तो वह इस नियंत्रण से मुक्त हो जाएगी।

1819 और 1821 में दो सुप्रीम कोर्ट जजों ने सती प्रथा को समाप्त करने का अनुरोध किया। उन्होंने तर्क दिया कि इस प्रकार की अमानवीय प्रथा को समाप्त करने से किसी भी प्रकार का जन-प्रतिरोध नहीं होगा। सरकार ने इस तर्क को ठुकरा दिया। 1821 में लार्ड हेस्टिंग्स ने सती प्रथा की पूण समाप्ति के अनुरोध को जन असंतोष और धार्मिक उन्माद फैलने के भय से अस्वीकार कर दिया। हेस्टिंग्स का उत्तराधिकारी लार्ड एमहर्स्ट सती प्रथा पर प्रतिबंध लगाए जाने के खिलाफ था क्योंकि उसे भय था कि इससे सेना के भारतीय सिपाहियों पर तत्काल उल्टा असर पड़ेगा। बम्बई सरकार और दिल्ली में चार्ल्स मेटकॉफ भी इस प्रथा को तत्काल दबाने के पक्ष में नहीं थे।

एक तरफ सरकार इस मुद्दे पर कुछ भी फैसला लेने में हिचकिचाती रही, डरती रही, दूसरी तरफ राममोहन राय के नेतृत्व में पाश्चात्य प्रभाव से युक्त बंगाली बुद्धिजीवी वर्ग ने सती प्रथा के उन्मूलन के लिए आंदोलन खड़ा कर दिया। उन्होंने 1818 में इस प्रथा को समाप्त करने के लिए सरकार के पास एक ज्ञापन भेजा और कट्टरपंथी सती प्रथा समर्थक हिंदुओं के तर्कों का खंडन किया। सती प्रथा में उम्र पर लगे प्रतिबंध को कड़ाई से लागू किए जाने के लिए एक निरीक्षण समिति की स्थापना की। राममोहन राय ने काशीनाथ तर्कावागीश (1819) जैसे सती प्रथा समर्थकों से बहस की, इस प्रथा के खिलाफ जनमत तैयार करने के लिए पर्चे निकाले, अखबारों में लेख लिखे। इस मुहिम को जारी रखने के लिए उन्होंने अपनी पत्रिका संवाद कौमुदी का इस्तेमाल किया। उनके इस मुहिम को समाचार दर्पण और बंगदूत जैसे अखबारों का भी समर्थन प्राप्त हुआ। कट्टर हिंदू सती विरोधी समर्थकों ने समाचार चंद्रिका को अपनी वाणी का माध्यम बनाया।

इसी समय ईसाई मिशनरियों ने ब्रिटेन की अंग्रेज़ जनता का ध्यान सती प्रथा जैसी कुप्रथा की ओर आकृष्ट किया और सरकार द्वारा इस पर अतिशीघ्र रोक लगाने की आवश्यकता पर बल दिया। संसद ने भारत सरकार को सती प्रथा से संबद्ध सारी सूचनाएं प्रकाशित करने का निर्देश दिया।

भारत और ब्रिटेन में इस प्रथा की समाप्ति के लिए उठती आवाज़ों के बावजूद इंग्लैंड की संसद और कंपनी के कर्ता-धर्ता खुद-बखुद कोई निर्णय नहीं लेना चाहते थे, उन्हें भारत में होने वाली संभावित प्रतिक्रिया की कोई जानकारी नहीं थी। अंततः निर्णय बेंटिक पर छोड़ा गया, जिसने दिसम्बर 1829 में विधवाओं के जलाने के खिलाफ अधिनियम पारित किया।

सरकार द्वारा सती प्रथा के उन्मूलन से जनता में कोई उल्लेखनीय प्रतिरोध या असंतोष पैदा नहीं हुआ। बाल हत्या के समान सती प्रथा को रोकने में पाश्चात्य विचारों से प्रभावित भारतीय बुद्धिजीवियों, ईसाई मिशनरियों और कुछ खास प्रशासकों ने पहल की। कंपनी सरकार ने केवल जन असंतोष के भय से इतनी देर तक टाल-मटोल का रवैया अपनाया।

25.4.3 दास प्रथा

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत में प्रचलित दास प्रथा पर भी प्रहार किया गया। भारत में दास प्रथा मज़दूरों के शोषण के रूप में उपस्थित थी। 1843 में इसका उन्मूलन हुआ। अर्थशास्त्र की शब्दावली में दास मज़दूर का आर्थिक महत्व और प्रसार विभिन्न प्रदेशों में अलग-अलग था। बम्बई और कलकत्ता में दास व्यापार की एक वस्तु थे, अरब व्यापारी अरब और अफ्रीका से बेचने के लिए दास ले आते थे। अकाल से बचने के लिए (मसलन 1803 ई. में) गरीब काफी संख्या में अपने को दास के रूप में बेच देते थे।

अन्य दो प्रेसिडेंसियों से अलग मद्रास में भूमि-संबंधी दास प्रथा महत्वपूर्ण थी। इस प्रदेश के कृषीय उत्पादन में इस प्रकार की दास प्रथा पाई जाती थी। मालाबार, कूर्ग और कनारा में भूमि संबंधी दास प्रथा व्यापक रूप में फैली हुई थी।

दास प्रथा के उन्मूलन में भी भारत सरकार टालमटोल की नीति अपनाती रही। 1774 ई. में ही सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट करा दिया गया था। विल्बरफोर्स के नेतृत्व में धर्म-प्रचार संबंधी सिद्धांत के प्रचार के क्रम में ब्रिटेन की जनता का ध्यान भारत में प्रचलित दास प्रथा की ओर आकृष्ट कराया गया। हालांकि अपने राज्य में 1820 में ही ब्रिटेन दास प्रथा को समाप्त कर चुका था, पर कंपनी ने भारत में प्रचलित दास प्रथा का इस आधार पर समर्थन किया कि वह एक परंपरागत प्रथा थी, जिसे धार्मिक अनुशंसा प्राप्त थी।

1832 के चार्टर अधिनियम में भारत सरकार को दासों की दशा सुधारने के निर्देश दिए गए "जैसे ही यह लगे कि उन्मूलन व्यावहारिक और खतरे से मुक्त है और इस उद्देश्य से कानून और नियम का ड्राफ्ट तैयार किया जाना चाहिए।"

इस उद्देश्य से 1835 ई. में भारतीय विधि आयोग की स्थापना की गई। हालांकि इसका मूल कार्य दंड संहिता तैयार करना था, पर इस आयोग ने 1841 में दास प्रथा विरोधी रिपोर्ट तैयार कर ली। विधि आयोग ने सरकार से अनुरोध किया कि इसके कुछ सदस्यों को स्थानीय स्तर पर इस प्रथा की जांच करने की अनुमति दी जाए। सरकार ने इस अनुमति को ठुकरा दिया।

1839 में विधि आयोग ने एक ड्राफ्ट अधिनियम पेश किया, जिसके मुताबिक दासों को शारीरिक तौर पर दंडित करना कानूनन अपराध माना गया। इस ड्राफ्ट अधिनियम पर कोई कार्यवाई करने के पूर्व आयुक्तों ने जन असंतोष की किसी भी संभावना पर विचार-विमर्श किया। 1811 का नियम X (भूमि के रास्ते दासों के आयात पर प्रतिबंध), 1832 का नियम IV (दासों के अंतरप्रांतीय हस्तांतरण पर प्रतिबंध) और दिल्ली में दास प्रथा की समाप्ति की समीक्षा की गई और यह पाया गया कि इस कार्यवाई का कोई हिंसात्मक परिणाम सामने नहीं आया। आयोग के कई सदस्य इस अधिनियम को तुरंत लागू करने के खिलाफ थे। अत: बंबई और मद्रास सरकार के पास इस संबंध में सलाह लेने के लिए पत्र भेजे गए। बंबई सरकार ने इस प्रकार के किसी विशेष कानून बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं की और मद्रास सरकार ने इस प्रकार के कानून की उपयुक्तता का सवाल उठाया।

संसद के दबाव में आकर विधि आयोग को पुन: एक नया कानून बनाने का आदेश दिया गया। भारतीय सरकार ने इसे पारित करने में काफी समय लगाया। अंतत: 1845 के अधिनियम V द्वारा भारत में दास प्रथा की समाप्ति की गई।

दास प्रथा के उन्मूलन से सम्बद्ध बने कानून का असर काफी सीमित था। यह कानून केवल इतना ही कहता था कि ब्रिटिश न्यायालय में अब दासों से कराए गए श्रम को मंजूरी नहीं दी जाएगी और कोई भी सरकारी पदाधिकारी अब अपने मालिक के पास लौटने के लिए किसी दास पर दबाव नहीं डाल सकेंगे।

25.5 अंग्रेज़ों की नीति और भारतीय प्रतिक्रिया : एक मूल्यांकन

ऊपर किए गए विचार-विमर्श से यह बात स्पष्ट होकर सामने आती है कि भारतीय परम्पराओं और संस्कृति के प्रति ब्रिटिश दृष्टिकोण में लगातार परिवर्तन होता रहा। भारतीय उपनिवेश के अनुचर या सहायक की भूमिका में बदलाव और भारत सरकार की राज्य संबंधी राजनीतिक दृष्टिकोण से भारत की राजनीति प्रभावित हुई।

भारत की सामाजिक प्रथा और रीति-रिवाजों में राज्य के हस्तक्षेप का मामूली असर पड़ा। जबकि, औपनिवेशिक सरकार द्वारा पूर्व औपनिवेशिक राजनीतिक ढांचे को बदल देने से महत्वपूर्ण सामाजिक बदलावों की शुरुआत हुई। अंग्रेज़ों ने जान-बूझकर पूर्व औपनिवेशिक भारत शासक समुदाय को राजनीतिक शक्ति और विशेषाधिकार नहीं दिए, जबकि अंग्रेज

उनकी सामाजिक और जातिगत हैसियत से वाकिफ थे।

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण अस्त्र था। इसका प्रभाव बनाए गए अधिनियम में कहीं ज्यादा था। (देखें इकाई 21)

पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त अल्पसंख्यक बंगाली बुद्धिजीवी वर्ग सरकार से राज्य की नीतियों पर बहस करता था, नीतिगत बदलावों पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता था और अपने स्तर पर सामाजिक परिवर्तन की भी कोशिश करता था। राममोहन राय और केशवचन्द्र सेन जैसे बुद्धिजीवी ब्रिटेन में हुए विकास से प्रभावित थे और उनका दृढ़ विश्वास था कि भारतीय समाज को बदलना जरूरी था। इसी के साथ-साथ उन्होंने धर्म प्रचार और ईसाई मिशनरियों द्वारा भारतीयों के धर्म परिवर्तन के प्रयत्नों का विरोध किया।

राममोहन राय जैसे बुद्धिजीवियों ने वेदांतवाद जैसे सुधारवादी भारतीय धर्म से लोगों को परिचित कराया, जो अंधविश्वास और पंडित पुजारियों के शिकंजे से दूर था। ब्रहमो समाज उनका संगठन था, जिसमें हिंदू धर्म के बदले हुए रूप और प्रगतिशील पश्चिमी मूल्यों को स्थान दिया गया। दुर्भाग्य से ब्रहमदेव और बंगाल सुधारवादी समुदाय अपनी बात पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त सीमित बंगाली जन-समुदाय से बाहर नहीं पहुंचा सके। पर सामाजिक सुधार का यह संदेश धीरे-धीरे भारत के कई भागों में फैलने लगा और इससे कई भारतीय सुधार की ओर उन्मुख हुए। बिना सरकारी सहायता के उनके नेतृत्व में समाज सुधार आंदोलन हुए। (देखें इकाई 26 और 27)

यह बात याद रखनी चाहिए कि भारतीय ब्रिटिश सरकार ने सुधारों को लागू करने में काफी टालमटोल की और उनके सियासत संबंधी मसलों के कारण सामाजिक सुधारों को लागू करने में देर हुई। सामाजिक और धार्मिक मामलों में सरकार बहुत सावधानी से दखल देना चाहती थी। 1857 के विद्रोह के बाद तो सरकार ने सामाजिक मामलों में दखल देना ही छोड़ दिया। इसके बाद यहां के लोगों ने ही सामाजिक सुधार के प्रयत्न किए।

बोध प्रश्न 2

1) वारेन हेस्टिंग्स के शासन काल के बाद औपनिवेशिक सामाजिक नीति में आने वाले परिवर्तनों के कारणों का उल्लेख करें।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2) सती प्रथा, बाल हत्या और दास प्रथा के संदर्भ में ब्रिटिश नीतियों के विकास और प्रभाव पर प्रकाश डालें।

....
....
....
....
....
....

25.6 सारांश

हम आशा करते हैं कि इस इकाई को पढ़कर आपने भारत में अंग्रेज़ों की सामाजिक नीति को प्रभावित करने वाले वैचारिक और भौतिक कारणों की जानकारी प्राप्त कर ली होगी। कुछ प्रशासकों, मिशनरियों और भारत के समाज सुधारकों के दबाव में आकर भारत सरकार ने बड़ी सावधानीपूर्वक भारत की सामाजिक प्रथाओं में हस्तक्षेप किया। पर इन नीतियों का कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा और भारतीयों की ओर से कोई प्रखर प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त की गई। 1857 के बाद तो जान-बूझकर औपनिवेशिक सरकार ने यह रहा-सहा प्रयत्न भी छोड़ दिया।

25.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखें भाग 25.2
2) देखें भाग 25.3

बोध प्रश्न 2

1) आप भाग 25.3 और 25.4 से सूचना इकट्ठी कर सकते हैं और फिर उनकी आपस में तुलना कर सकते हैं।
2) देखें भाग 25.4